आमन्त्रण

तृतीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठी

भारत में जनवादी अधिकार आन्दोलन :
दिशा, समस्याएँ, और चुनौतियाँ

22-23-24 जुलाई, 2011

लखनऊ (उ.प्र.)

आयोजक :

अरविन्द स्मृति न्यास

लखनऊ

प्रिय साथी,

अपने अनन्य सहयात्री दिवंगत **का. अरविन्द** की स्मृति में इस बार **तीसरी अरविन्द स्मृति संगोष्ठी** का आयोजन हम उत्तर प्रदेश की राजधानी **लखनऊ** में कर रहे हैं। सामयिकता और प्रासंगिकता की दृष्टि से इस बार तीन दिवसीय अखिल भारतीय संगोष्ठी का विषय रखा गया है: **'भारत में जनवादी अधिकार आन्दोलन : दिशा, समस्याएँ और चुनौतियाँ।'**

हमारे मेधावी-ऊर्जस्वी युवा साथी अरविन्द के निधन से भारत के मज़दूर आन्दोलन, सांस्कृतिक आन्दोलन और वैकल्पिक जन-मीडिया आन्दोलन को अपूरणीय क्षति पहुँची। **अरविन्द स्मृति न्यास** और **अरविन्द मार्क्सवादी अध्ययन संस्थान** की स्थापना उनकी स्मृति को संकल्प में ढालने और शोक को शक्ति में बदलने का विनम्र, साझा प्रयास है। प्रथम और द्वितीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठियाँ (*जुलाई 2009, दिल्ली और जुलाई 2010, गोरखपुर)* भूमण्डलीकरण के दौर में भारतीय मज़दूर आन्दोलन की दिशा, सम्भावनाओं, समस्याओं और चुनौतियों पर केन्द्रित थीं।

इस बार तीन दिनों की संगोष्ठी भारत में जनवादी अधिकार एवं नागरिक स्वतन्त्रता आन्दोलन की दशा-दिशा, समस्याओं, चुनौतियों और सम्भावनाओं पर केन्द्रित होगी। इस विषय की दीर्घकालिक एवं साम्प्रतिक महत्ता और प्रासंगिकता स्वत: स्पष्ट है। यह सवाल पहले से ही उठाया जाता रहा है कि भारतीय संविधान आम जन को जो सीमित जनवादी अधिकार देता है, उनके अपहरण एवं स्थगन के प्रावधान भी इस संविधान के भीतर ही मौजूद हैं। सवाल यह

भी बहुत पुराना है कि बहुतेरे आयोगों-कमेटियों की सिफ़ारिशों और कुछ रंग-रोगनों तथा पैबन्दसाज़ियों के बावजूद, क़ानून-व्यवस्था और पुलिस एवं नागरिक प्रशासन के ढाँचे पर औपनिवेशिक अतीत का प्रेत आज भी सवार है। ऐसे में संविधान से नीचे रिसने वाले अति सीमित जनवादी अधिकार भी क़ानून-व्यवस्था और नौकरशाही के मकड़जाल में उलझकर रह जाते हैं। संवैधानिक उपचार तक केवल समाज के मुखर, शिक्षित और आर्थिक रूप से सक्षम तबके की ही पहुँच होती है। आम जनता को सिर्फ़ क़ानूनी उपचार ही नसीब होता है और वह भी लालफ़ीताशाही और भ्रष्टाचार के कारण काफ़ी हद तक रस्मी बनकर रह जाता है। लाखों की तादाद में दसियों-बीसियों सालों से लम्बित मुक़दमे, दसियों सालों से जेलों में बन्द विचाराधीन क़ैदी, फ़र्ज़ी मुठभेड़ें, टॉर्चर, राजनीतिक बन्दियों के अधिकारों का अपहरण, पुलिसिया स्वेच्छाचारिता – ये सारी बातें सभी जानते हैं।

प्राय: कुछ समाजविज्ञानी यह कहते रहे हैं कि साम्राज्यवादी विश्व से निर्णायक विच्छेद किये बिना और क्रान्तिकारी ढंग से भूमि सम्बन्धों को बदले बिना जनता को सच्चे अर्थों में सम्प्रभु और जनवादी अधिकार-सम्पन्न बना पाना सम्भव ही नहीं था। यह सचमुच इतिहास का एक विचारणीय मुद्दा है। सवाल यह भी है कि जिस समाज में राजनीति एवं सभी सार्वजनिक मामलों से धर्म के पूर्ण पृथक्करण के रूप में सेक्युलरिज़्म को स्थापित नहीं किया जायेगा, उस समाज में क्या धार्मिक अल्पसंख्यकों और दलित जातियों के जनवादी अधिकार कभी सुरक्षित रह सकेंगे!

यह अनायास नहीं है कि उदारीकरण-निजीकरण के गत बीस वर्षों के दौरान केन्द्र और राज्यों के स्तर पर निरंकुश काले क़ानूनों की संख्या तेज़ी से बढ़ी है, पुलिस एवं नागरिक प्रशासन का चरित्र ज़्यादा से ज़्यादा निरंकुश स्वेच्छाचारी होता चला गया है। व्यापक जनता की आर्थिक दुरवस्था बढ़ने के साथ ही उसके न्यूनतम जनवादी अधिकार भी छिनते जा रहे हैं। प्राकृतिक संसाधनों और सस्ती श्रम-शक्ति के लिए आदिवासी और अन्य ग़रीब लोग बन्दूक की नोक पर अपनी जगह-ज़मीन से उजाड़े जा रहे हैं और जनाक्रोश को दबाने के लिए "आतंकवाद" और "माओवाद" के दमन के नाम पर देश के बहुतेरे इलाकों में सरकार ने देश की जनता के विरुद्ध ही अघोषित युद्ध छेड़ रखा है। यहीं पर इस तथ्य को भी रेखांकित कर दिया जाना ज़रूरी है कि कश्मीर और उत्तर-पूर्व के जिन राज्यों में दशकों से '*सशस्त्र बल (विशेष अधिकार) अधिनियम*' लागू है वहाँ आम लोग व्यवहारत: सैनिक शासन के अन्तर्गत जी रहे हैं। उनके लिए संविधान-प्रदत्त जनवादी अधिकारों का कोई मतलब नहीं है।

विगत क़रीब ढाई दशकों का समय ही धार्मिक कट्टरपन्थी, विशेषकर हिन्दुत्ववादी शक्तियों के उभार का और विभाजन के बाद के सर्वाधिक भीषण साम्प्रदायिक दंगों और नरसंहार का दौर रहा है। यह अनायास नहीं है। आर्थिक अनुदारवाद (कथित नवउदारवाद) ने धार्मिक-नस्ली-जातीय अनुदारवाद के लिए उर्वर ज़मीन तैयार की है। समाज का रहा-सहा जनवादी स्पेस भी विगत दो दशकों के दौरान तेज़ी से सिकुड़ा है और कमज़ोर तबकों पर इसका सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है। भारतीय सामाजिक ताने-बाने में जाति और जेण्डर के आधार पर पहले से जो निरंकुश उत्पीड़क प्रवृत्तियाँ मौजूद रही हैं, उनके विरुद्ध हालाँकि प्रतिरोध के स्वर मुखर हुए हैं, लेकिन पूँजी की नयी मानवद्रोही संस्कृति ने उन्हें नयी ताक़त और नये रूप देने का काम भी किया है।

❑

इस संगोष्ठी में जनवादी अधिकार और नागरिक आज़ादी के लिए संघर्षरत बुद्धिजीवियों – विधिवेत्ताओं, अकादमीशियनों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, लेखकों, मीडियाकर्मियों और संस्कृतिकर्मियों के साथ हम उपरोक्त स्थितियों पर विचार-विमर्श करना चाहते हैं, जनवादी अधिकार आन्दोलन से जुड़े जीवन्त-ज्वलन्त प्रश्नों-समस्याओं को चर्चा एवं बहस के केन्द्र में लाना चाहते हैं और आज की स्थिति से उपजी चिन्ताओं को साझा करना चाहते हैं।

- *जनवादी अधिकारों और नागरिक अधिकारों को बचाने की लड़ाइयाँ देश के विभिन्न कोनों में चलती रही हैं, लेकिन ये सब काफ़ी बिखरी हुई और नाक़ाफ़ी हैं, इससे शायद ही कोई इंकार करे। प्रगतिशील, सेक्युलर, जनवादी अधिकारों के प्रति समर्पित बुद्धिजीवियों और सामाजिक कार्यकर्ताओं की तादाद इतनी बड़ी है कि अगर वे एकजुट होकर आवाज़ उठायें तो एक ताक़त बन सकते हैं। लेकिन कड़वी सच्चाई यह है कि जनवादी अधिकारों पर लगातार बढ़ते जा रहे हमलों का जवाब आज पहले से भी कम प्रभावी ढंग से दिया जा पा रहा है। देश के विभिन्न हिस्सों में पहले की अपेक्षा आज संख्या में कहीं अधिक जनवादी अधिकार संगठन मौजूद हैं। जनवादी अधिकार आन्दोलन की प्रकृति एवं दिशा को लेकर उनके बीच कुछ सैद्धान्तिक असहमतियाँ हो सकती हैं, लेकिन गम्भीर और चिन्तनीय*

प्रश्न यह है कि राजकीय दमन या काले क़ानूनों के दूरगामी अथवा फ़ौरी महत्व के किसी बेहद अहम मुद्दे पर भी वे एकजुट होकर आवाज़ क्यों नहीं उठा पाते? किसी ज्वलन्त सवाल पर देश के जनवादी अधिकार संगठनों का कोई साझा मोर्चा आख़िरकार क्यों नहीं बन पाता है?

- *इससे कहीं अधिक वृहत्तर परिप्रेक्ष्य और बुनियादी महत्व वाला सवाल यह है कि क्या जनवादी अधिकार आन्दोलन को केवल कुछ याचिकाएँ दाख़िल करने, हस्ताक्षर अभियान चलाने, जाँच टीमें भेजकर रिपोर्टें प्रकाशित करने और प्रतीकात्मक धरना-प्रदर्शन करने जैसी कार्रवाइयों तक ही सीमित रहना चाहिए? क्या हमें खुद से यह सवाल नहीं करना चाहिए कि जनवादी अधिकार आन्दोलन में उन आम लोगों की भागीदारी क्यों नहीं है जिनके जनवादी अधिकारों और नागरिक स्वतन्त्रताओं का रोज़मर्रा के जीवन में क़दम-क़दम पर सबसे अधिक हनन होता है? जनवादी अधिकार आन्दोलन का मतलब प्रबुद्ध लोगों द्वारा आम लोगों के मुद्दों को उठाना मात्र होकर क्यों रह गया है? यह राजनीतिक विरोधियों के सत्ता द्वारा उत्पीड़न, फ़र्ज़ी मुठभेड़ों के विरुद्ध सिर्फ़ प्रतीकात्मक आन्दोलन या क़ानूनी लड़ाई मात्र बनकर क्यों रह गया है? क्या जनवादी अधिकार आन्दोलन को व्यापक सामाजिक आधार वाला जनान्दोलन बनाने की ज़रूरत नहीं है? क्या आम लोगों को उनके जनवादी अधिकारों और नागरिक अधिकारों के प्रति सचेत और जागरूक बनाना तथा अपने जनवादी अधिकारों की हिफ़ाज़त एवं विस्तार के लिए उन्हें संगठित करना हमारा बुनियादी कार्यभार नहीं होना चाहिए?*

❑

बेशक, सवाल बहुत बड़े हैं, लेकिन बड़े सवाल भी हमारे सामने इसीलिए उपस्थित होते हैं कि उनके जवाब ढूँढ़े जायें। इस संगोष्ठी से हम इन बुनियादी मुद्दों पर, और इनसे जुड़े कुछ सामयिक एवं ज़रूरी परिधिगत मुद्दों पर, सार्थक विचार-विमर्श की एक विनम्र शुरुआत करना चाहते हैं। **हम इस क्षेत्र में काम करने वाले और दिलचस्पी रखने वाले सभी बुद्धिजीवियों – न्यायविदों, अकादमीशियनों, मीडियाकर्मियों, संस्कृतिकर्मियों, लेखकों-कवियों, और सामाजिक कार्यकर्ताओं को इस विचार-विमर्श में शामिल होने के लिए आग्रहपूर्वक आमन्त्रित कर रहे हैं।** हमें उम्मीद है कि इन तीन दिनों के दौरान औपचारिक और अनौपचारिक चर्चाओं में हम मिल-बैठकर सोचेंगे तो आगे क़दम बढ़ाने के लिए कुछ बिन्दु निश्चय ही निकलकर सामने आयेंगे।

हमारी कोशिश रहेगी कि जनवादी अधिकार आन्दोलन की दिशा और समस्याओं पर चर्चा के साथ-साथ इनसे जुड़ते हुए दायरे में धार्मिक कट्टरपन्थ, दलितों और स्त्रियों के उत्पीड़न, उत्तर-पूर्व और कश्मीर की जनता के जनवादी अधिकारों के अपहरण, माओवाद के ख़ात्मे के नाम पर राज्यसत्ता द्वारा जनता के विरुद्ध छेड़े गये युद्ध, तरह-तरह के क़ाले क़ानूनों तथा मीडिया और जनवादी अधिकार आन्दोलन जैसे विषयों पर भी कुछ पर्चे पढ़े जायें और चर्चा हो।

अगर आप अपना आलेख/पेपर लेकर आ सकें तो और भी अच्छा रहेगा। इसकी सूचना हमें 10 जुलाई तक मिल जाये तो बेहतर होगा। यदि आप आलेख भी पहले भेज सकें तो सत्रों की योजना बनाने में हमें आसानी होगी।

हम आपसे इस संगोष्ठी में भागीदारी का हार्दिक आग्रह करते हैं। आप अपने पहुँचने की तिथि, ट्रेन, बस, फ़्लाइट आदि की सूचना नीचे दिये गये किसी भी मोबाइल नम्बर या लैण्डलाइन नम्बर पर दे सकते हैं। कोई भी सूचना देने-लेने का काम आप नीचे दिये ईमेल पतों पर भी कर सकते हैं। हम आपको आत्मीयतापूर्ण आतिथ्य का भरोसा देते हैं और आश्वस्त करते हैं कि आपको किसी प्रकार की असुविधा नहीं होगी।

हम आपके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

– हार्दिक अभिवादन सहित,

मीनाक्षी (प्रबन्ध न्यासी)

आनन्द सिंह (सचिव)

कात्यायनी, सत्यम (सदस्य)

अरविन्द स्मृति न्यास

कार्यक्रम

22 जुलाई

प्रथम सत्र

(प्रातः 10 बजे से अपराह्न 1 बजे तक)

स्वागत-वक्तव्य। विषय प्रवर्तन।
आधार-आलेख प्रस्तुति।

द्वितीय सत्र

(अपराह्न 3 बजे से रात्रि 8 बजे तक)

आधार-आलेख पर बातचीत।
अन्य आलेखों की प्रस्तुति।

24 जुलाई

प्रथम सत्र

(प्रातः 10 बजे से अपराह्न 1 बजे तक)

आलेखों का पाठ और उन पर बहस जारी।

द्वितीय सत्र

(अपराह्न 3 बजे से रात्रि 8 बजे तक)

बहस जारी। सम्पूर्ण संगोष्ठी में प्रस्तुत
विचारों-दृष्टिकोणों का समाहार।

23 जुलाई

प्रथम सत्र

(प्रातः 10 बजे से अपराह्न 1 बजे तक)

आलेखों का पाठ और उन पर बहस जारी।

द्वितीय सत्र

(अपराह्न 3 बजे से रात्रि 8 बजे तक)

आलेखों का पाठ और उन पर बहस जारी।

भोजनावकाश : अपराह्न 1 बजे से 3 बजे तक

द्वितीय सत्र में चाय का अन्तराल :
शाम 6 बजे

अतिथियों के लिए नेहरू युवा केन्द्र में नाश्ता :
सुबह 8:30 से 9:30 तक

अतिथियों के लिए नेहरू युवा केन्द्र में
रात का खाना : रात 9 बजे से

आयोजन स्थल

वाल्मीकि रंगशाला, उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी
निकट भारतीय रिज़र्व बैंक परिसर, विपिन खण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ

अतिथि आवास

जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय युवा केन्द्र, रूमी दरवाज़ा के निकट, चौक, लखनऊ

आप आयोजन समिति के निम्नलिखित किसी भी सदस्य से,
या न्यास के लखनऊ कार्यालय से सम्पर्क कर सकते हैं:

मीनाक्षी - फ़ोन: 9212511042, ईमेल: meenakshy@arvindtrust.org

आनन्द सिंह -फ़ोन: 9689034229, ईमेल: anand.banaras@gmail.com

कात्यायनी - फ़ोन: 9936650658, ईमेल: katyayani.lko@gmail.com

सत्यम - फ़ोन: 9910462009, ईमेल: satyamvarma@gmail.com

लखनऊ कार्यालय का पता :
69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ - 226006

ईमेल: info@arvindtrust.org, arvindtrust@gmail.com

वेबसाइट: arvindtrust.org